IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 1, February 2026
Impact Factor: 8.2

नवगीत अभ्युदय और विस्तार का अध्ययन

डॉ. राजेन्द्र द्विवेदी एवं पूनम सिंह

प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी), शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)

शोधार्थी (हिन्दी), शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)

शोध सारांशः

प्रस्तुत शोध पत्र आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास में 'नवगीत' आंदोलन के अभ्युदय और उसके क्रमिक विस्तार का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। छायावादोत्तर काल में जब प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और नई कविता के दौर में पारंपरिक गीतों की प्रासंगिकता पर सवाल उठ रहे थे, तब 1950–1960 के दशक में 'नवगीत' का जन्म हुआ। डॉ. शंभुनाथ सिंह के संपादन में प्रकाशित 'नवगीत दशक' (1958) ने इसे एक सुसंगत वैचारिक और शिल्पगत पहचान दी। यह शोध पत्र रेखांकित करता है कि नवगीत कोई पुराना छंदबद्ध पारंपरिक गीत नहीं है, बल्कि यह समकालीन जीवन की विसंगतियों, महानगरीय बोध, और लोक–संस्कृति की सोंधी गंध का आधुनिक समन्वय है। इसके विस्तार के अंतर्गत अज्ञेय, ठाकुर प्रसाद सिंह, वीरेंद्र मिश्र से लेकर समकालीन रचनाकारों के योगदान का मूल्यांकन किया गया है। इस प्रकार से नवगीत ने कविता को बौद्धिकता के बोझ से मुक्त कर पुनः लोक–मानस से जोड़ने और हिंदी साहित्य को एक नया कथ्य व शिल्प प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। इन्हीं बिन्दुओं को शोध पत्र में उल्लेख करने का एक प्रयास है।

मुख्य शब्दः–नवगीत, आधुनिक हिंदी कविता, नवगीत का अभ्युदय, शंभुनाथ सिंह, विस्तार, लोक–चेतना, शिल्प।

प्रस्तावना :–

गीत मानव जाति का आदिम काव्य रूप है। मनुष्य जाति ने जब सभ्यता के विकास के प्रथम सोपान में चरण रख उसी समय सामूहिक नृत्यगीत के रूप में गीत और नृत्य दोनों का एक ही साथ प्रारंभ हुआ था। उस काल के सामुदायिक जीवन की भावात्मक और आत्माभिव्यंजक अभिव्यक्ति का एक मात्र साधन नृत्य गीत ही था। आदिम मानव जब प्रस्तर– युग में था और गुफाओं में रहता तथा शिकार द्वारा जीवन–यापन करता था, उस समय वह शिकार के उपरान्त एक साथ मिलकर नृत्य करता तथा समवेत रूप में गायन करता था। इस तरह नृत्य और गीत का तत्कालीन स्वरूप अविभाज्य था।

ज्यों–ज्यों सभ्यता का विकास होता गया, त्यों–त्यों सामूहिक नृत्य गीत से उसके कई तत्व अलग होकर स्वतंत्र कलाओं के रूप में विकसित होते गये। इससे यह स्पष्ट है कि काव्य की प्रारंभिक विधा गीत ही था। क्रमशः गीत से ही काव्य की अन्य विधाएँ भी विकसित होती गयीं। इस प्रकार प्रबंध–काव्य तथा मुक्तक–काव्य का भी गीत काव्य के समानान्तर प्रचलन हुआ। गीत–काव्य की प्रमुख विशेषता उसकी गेयता और आत्माभिव्यंजकता थी। प्रबंध–काव्य में कथात्मक वर्णन होता था जिसमें कथानक के घटनाक्रम के साथ–साथ प्रासंगिक वातावरण एवं वस्तुओं का भी वर्णन किया जाता था। इस कारण प्रबंध–काव्यों में आत्माभिव्यंजना की जगह बाह्य वस्तुव्यंजना की ही योजना होती थी। उनमें कवि की वैयक्तिक अनुभूतियों और आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति के लिए

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 1, February 2026 Impact Factor: 8.2

अवकाश नहीं होता था। इसी तरह मुक्तक काव्य में कुछ सीमित पंक्तियों में ही किसी चमत्कारपूर्ण अथवा उपदेशात्मक सत्य की अभिव्यक्ति की जाती थी।

केवल गीत–विधा में ही कवि अपने मन की भावनाओं, सुख–दुःखात्मक अनुभूतियों वैयक्तिक जीवन की विविध दशाओं आदि का प्रकाशन स्वतंत्रतापूर्वक कर सकता था और गीतों की ही एक स्वच्छन्द विधा का स्वरूप समय–समय की उत्कृष्टता को समाहित करता हुआ नया रूपधारण करता रहा है। जो लोक–जीवन में सर्वाधिक लोकप्रिय साहित्य–विधा है।

सन् 1950 के बाद स्वतंत्रता–प्राप्ति के कारण देश की बदली हुई मानसिकता के फलस्वरूप काव्य के क्षेत्र में भी कुछ नया गुजरने का दौर प्रारंभ हुआ। देश की बदली हुई राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों तथा उत्तरोत्तर बढ़ते हुए औद्योगिक और वैज्ञानिक प्रभाव ने भी काव्य को नयी दिशा में मुड़कर अनुभूति के नये और अछूते आयामों को उद्घाटित करने के लिए विवश किया। फलतः छायावादोत्तर युग के दूसरे दशक (1950– 1960) में पुनः गुणात्मक परिवर्तन हुआ और हिन्दी कविता विकास की तीसरी अवस्था–संस्थिति की सीमा में प्रविष्ट हुई।

इस अवस्था में हिन्दी कविता की विभिन्न धाराओं का पारस्परिक संश्लेषण हुआ और उनकी बाढ़ग्रस्त भूमिकाएँ बहुत हद तक समाप्त हो गयी। उन सबका संश्लेषण ही गुणात्मक परिवर्तन था, जिससे कविता ने एक नवीन रूप ग्रहण कर लिया। इसी को नयी कविता नाम दिया गया जिसमें व्यक्तिवादी, स्वच्छदन्तावाद, प्रयोगवाद तथा प्रगतिवाद की प्रवृत्तियाँ अन्तर्निहित तो थीं पर उनकी अलग पहचान लुप्त हो गयी थी। इन सभी धाराओं के प्रमुख नये कवि एक कविता–मंच पर एकत्र हो गये। इस नवीन काव्य धारा में सभी काव्य विधाओं– गीत काव्य, मुक्त काव्य, प्रबंध काव्य, लम्बी कविता को निःसंकोच भाव से अपनाया गया। इस तरह नयी कविता के अन्तर्गत आने वाले गीत काव्य का रूप–शिल्प भी पूर्णतः बदला हुआ था और उसे नयी कविता का ही अंग माना जाने लगा। अज्ञेय ने इसी को नयी कविता का गीत कहा था और बाद में गीत की इसी धारा के विकसित रूप को नवगीत की संज्ञा दी गयी। गीत का यह नया रूप पूर्ववर्ती पारम्परिक गीतों के रूप में अत्यधिक भिन्न एवं सारगर्भित था।

नवगीत का अभ्युदय के कारण विश्लेषण किया जाये तो– नवगीत हिन्दी गीत कविता की विकासमान अभिनव और आधुनिक कड़ी का दृश्य प्राप्त होता है। उसके प्रादुर्भाव के बीज न तो पश्चिम की किसी काव्य–प्रवृत्ति की प्रेरणा में है और न ही किसी काव्य– धारा की प्रतिक्रिया में है। यह तो पहले भी कहा जा चुका है कि वह स्वतः कोई काव्यान्दोलन नहीं है। नवगीत का निराला के जिन गीतों से है उनकी प्रवृन्यात्मक पहचान ही परोक्षतः नवगीत के अभ्युदय के कारण है। गहरी रागात्मकता, भारतीय संस्कृतिकता का काव्यमय विस्तार, जीवन समर लड़ते हुए अदम्य पौरुष की आत्म पीड़ा और व्यापक लोक साहचर्य की तीव्र आकांक्षा नवगीत के उत्प्रेरक बिन्दु है।

नवगीत के नामकरण पर विचार करते हुए कुछ प्रमुख बिन्दुओं की स्पष्ट जानकारी अपेक्षित है। अथवा यों कहा जाय कि नामकरण शीर्षक के अन्तर्गत जो जिज्ञासाएँ प्रस्तुत होती हैं वे निम्नांकित तीन प्रश्नों में समादृत है। प्रथम नवगीत का नामकरण कब हुआ? दूसरा किसने नामकरण किया? तीसरा नामकरण क्यों किया? इन सभी का उत्तर तो नवगीत का उद्भव में समाहित है।

नवगीत के नामकरण को लेकर एक आनुषांगिक बात अवश्य विचारणीय है वह यह कि रमेश रंजक अपने कथन में जिन नये गीत गीतों की ओर संकेत कर रहे हैं उनके बारे में नामकरण कर्ता राजेन्द्र प्रसाद सिंह की क्या अवधारणा है? श्री सिंह ने 'गीतांगिनी' में नवगीत के जो पाँच तत्व निर्मित किये, जीवन दर्शन, आत्मनिष्ठा, व्यक्ति बोध, प्रीति तत्व और परिसंचय। इसके अतिरिक्त नई अनुभूतियों की प्रक्रिया, मार्मिक समग्रता, आधुनिक निकाय तथा नवीन प्रविधियों के संतुलन की पहचान भी श्री राजेन्द्र

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 1, February 2026 Impact Factor: 8.2

प्रसार सिंह जी ने नवगीत में की है। किंचित विचार कर देखें कि उपर्युक्त लक्षणों में ऐसा कौन–सा विशेष लक्षण है जो समकालीन कविता तो क्या किसी भी युग की कविता में न पाया जाता हो क्या उपर्युक्त तल नयी कविता, छायावादी काव्य और द्विवेदी युग के काव्यगत लक्षण नहीं हो सकते हैं? यही वह कारण है जहाँ स्पष्ट लगता है कि नवगीत का नामकरण श्री सिंह की भौतिक परिकल्पना नहीं है और यदि थोड़ी देर के लिए यह मान भी लिया जाये तो यह स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

नवगीत का नामकरण करते समय उनके मस्तिष्क में नवगीत की स्पष्ट छवि थी और तो और नवगीत के विशिष्ट तत्व व्यापक लोक संवेदना तक का जिक्र करना वे भूल गये। लोक भाषा, लोक चेतना, रंगात्मकता छान्दसिक वृत्ति और भारतीय अस्मिता की बात तो यह है कि श्री सिंह जी ने नवगीत के जो पाँच तत्व गिनाये हैं, उनमें से प्रीति को छोड़कर शेष का नवगीत में अस्वीकार है। डॉ0 विश्वनाथ प्रसाद ने भी हिन्दी नवगीत और नवगीतकार लेख माला के अन्तर्गत सन्दर्भ वश इसकी चर्चा की है।[1]

''वंशी और मादल'' के रचनाकार ठाकुर प्रसाद सिंह ने अपने लेख 'हिन्दी गीत कविता' में काशी से हुई गीत केंद्रित नौका गोष्ठी का जिक्र करते हुए लिखा है कि सन् 1951–52 में काशी में हुए साहित्यिक संघ के अधिवेशन में हिन्दी के नये गीतों पर चर्चा हुई थी।

चाँदनी रात में गंगा की धारा पर हुई नौका गोष्ठी में उस दिन भारती में नरेश मेहता, जगदीश गुप्त, रामदरश मिश्र, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, संभुनाथ, नामवर सिंह तथा अन्य कितने ही नये कवि उपस्थित थे। लगभग सभी कवियों ने अपने सुकण्ठ से नये गीत गाये थे काल से तरंग में यह पूरी रात बहकर किसी अनजाने घाट लग गई। काशी में इस नौका गोष्ठी के प्रमुख सहभागी शंभुनाथ सिंह दिसम्बर 1956 में इलाहाबाद में परिमल द्वारा आयोजित साहित्यकार सम्मेलन में शामिल हुए और फिर उन्हीं के शब्दों में उस अवसर जो काव्य गोष्ठी आयोजित हुई थी, उसमें मैंने ''पुरवैया धीरे बहो'' शीर्षक गीत सुनाया था, गीत को सुनाने से पूर्व मैंने कहा था कि अन्य साथियों ने नयी कवितायें सुनाई है, मैं एक नवगीत सुनाने जा रहा हूँ।

इस तरह बिना विचार–विमर्श और प्रस्ताव घोषणा के नयी कविता के मंच पर ही पहले–पहल नवगीत शब्द का प्रयोग सहज रूप से प्रारंभ हो गया। इसके साक्षी डॉ0 जगदीश गुप्त हैं, जो उस समय मेरी ही तरह नयी कविता और गीत दोनों की रचना करते थे। इसके बाद 'परिमल चेतना' की विचार गोष्ठियों, रेडियो की काव्य गोष्ठियों तथा अन्य आयोजनों में वे नये ढंग के गीतों के लिए नवगीत संज्ञा का प्रयोग करते रहे हैं।

नीचे दिये गये विवेचना से तथ्य स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आते हैं। नये ढंग के गीतों के लिए जो तथ्य दिये गये हैं, ये पूर्णतः स्पष्ट है–

1. नये ढंग के गीतों के लिए नवगीत संज्ञा का प्रयोग सर्वत्र डॉ0 शंभुनाथ सिंह ने किया है। अलबत्ता, मुद्रित रूप में 'गीतागिनी' के द्वारा राजेन्द्र प्रसाद सिंह उसे प्रकाश में लाये।

2. यह नवगीत का नामकरण 1958 (गीतांगनी की प्रकाशन तिथि)

3. परम्परागत गीत से भिन्न व उससे स्पष्ट अलगाव लिए हुए इस नये गीत के सर्वा स्वरूप की साफ–साफ धारणा डॉ0 शंभुनाथ सिंह की थी जबकि राजेन्द्र प्रताप सिंह नवगीत संज्ञा का प्रयोग करते हुए भी उसकी अन्तश्चेतना से अपरिचित थे।

नवगीत का न सिर्फ नामकरण सन् 1958 से पहले हो गया था वरन नया गीत साहित्यिक मंच के (परिवेश) द्वार पर पूरे जोर से दस्तक दे रहा था। इस संकेत की आवाज तत्कालीन साहित्यिक परिवेश में व्यक्त हो रही थी। विस्तार में ना जाकर यह संकेत करना पर्याप्त होगा कि नये गीत की पहचान कायम करने के लिए सन् 1958 से पूर्व रचनात्मक तौर पर विशेष रूप से शंभुनाथ सिंह तथा रचना साहित्य समीक्षा के क्षेत्र में वीरेन्द्र मिश्र सम्बद्ध थे। इस दिशा में शंभुनाथ सिंह की काव्यात्मक पहल इनके

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 1, February 2026 Impact Factor: 8.2

प्रथम काव्य संकलन 'रूप–रश्मि' (1941) में ही दिखाई पड़ने लगी जो कालान्तर में एकाग्र और धारदार होती चली गई। वीरेन्द्र मिश्र ने नये गीत की पहचान को रेखांकित करने के लिए कहुक छोटे–छोटे उपक्रमों के अतिरिक्त इलाहाबाद के साहित्यिक सम्मेलन में (दिसम्बर 1958) 'नयी कविता, नये गीत, मूल्यांकन की सीमायें' शीर्षक से एक निबंध प्रस्तुत किया जिसमें उन्होंने लिखा कि हिन्दी में एक नये गीत का जन्म हुआ।[2]

इस संक्षिप्त विवरण के प्रकाश में 'गीतांगिनी' में राजेन्द्र प्रसाद सिंह का यह कथन सारहीन न सही, पर पुनर्विचार की अपेक्षा तो रखता ही है कि तब तक (1958 नवगीत का न सवाल उठा था, न नामकरण हुआ था, न संभावना का आंकलन जो कुछ निःसन्देह पहली बार 'गीतांगिनी' के संपादकीय वक्तव्य में हुआ। वास्तव में क्या वीरेन्द्र मिश्र के उक्त लेखों में नये गीत की आहट न थी? लक्षणों का लेखांकन न सही पर उनके बिन्दु विश्लेषित नहीं किए गए थे। ''ऐसा था मानना जागतिक सच्चाई से मुख मोड़ना होगा।''[3]

नवगीत का नामकरण कब और किसने किया, उसके प्रत्युत्तर में इतने विस्तार में जानें कि आवश्यकता मात्र इसलिए हुई ताकि उस सरलीकृत प्रवृत्ति से बचा जा सके, जिसके चलते लोग नवगीत संज्ञा की शुरूआत राजेन्द्र प्रसाद सिंह और 'गीतांगिनी' में इस तरह देखते हैं जैसे वही नवगीत क प्रस्थान बिन्दु हों। नवगीत के नामकरण का श्रेय राजेन्द्र प्रसाद सिंह या किसी अन्य किसी को मिल जाने से 'नवगीत' का आसमान फट पड़ेगा या उसकी धरती दरक जायेगी। ऐसा नहीं है, किन्तु काव्येतिहास के प्रमाणीकरण में प्रश्न चिन्ह तो लग ही जाता है। अतएव यह विवरण न सिर्फ प्रासंगिक वरन् आवश्यक है।

अब इस प्रकरण में नवगीत संज्ञा के औचित्य पर विचार करना शेष रह जाता है। छायावादोत्तर साहित्यिक आन्दोलन के दौर में नवगीत एकमात्र विधा है जिसके नामकरण को लेकर कोई विवाद मत वैभिन्न नहीं है।

नवगीत संज्ञा को जैसी सर्वस्वीकृति प्राप्त हुई वह नयी कविता के अति बौद्धिक परिवेश में आश्चर्य जनक ही है। नयी कविता के मान्य अध्येता डॉ0 कांति कुमार उदार और खुले मन से इस विधा को महत्वपूर्ण उपलब्धि मानते हैं बल्कि उन रचनाओं के बिना किसी विवाद के नवगीत के रूप में अंकित किया जाना उचित समझते हैं। 'गीतांगिनी' को प्रकाशन के बाद व्यापक रूप से समादृत और लोकप्रिय इस संज्ञा को पहले जो अन्य नाम दिये गए, वे नयी कविता की भाँति किस्म–किस्म के अनेक रूप नाम नहीं थे। वरन् नये गीत 'नयी कविता भी गीत', 'नया गीत', 'आधुनिक गीत' और 'आज का गीत' आदि पांच नामों में इन्हें जाना गया। पाँच जोड़े बांसुरी नवगीत की विकास यात्रा को रेखांकित करने वाला प्रथम प्रमाणित समवेत संकलन है। इसके विस्तृत संपादकीय में चन्द्रदेव सिंह ने इस गीत को 'नया गीत' या 'नवगीत' कहते हुए छायावादी गीतधारा में छायावादोत्तर गीतधारा में अंतर कर प्रकारान्तर से नामकरण के औचित्य को भी प्रतिपादित किया है।

निराला जी के परवर्ती गीतों में शिल्प, छंद, अनुभूति, भाषा, प्रतीक और बिम्ब आदि के स्तर पर जो नयापन आया, वह न सिर्फ गीत विधा में नएपन का प्रस्थान बिन्दु है, बल्कि वह टटकापन व नव्यता ही उनके नामकरण का आधार और विकास की बुनियादी भूमि बना। इसलिए इसे यदि डॉ0 बच्चन 'आधुनिक गीत' ठाकुर प्रसाद सिंह व रामदरश मिश्र 'नये गीत' या केदार नाथ सिंह 'नया गीत' करना चाहते हैं तो इसमें आश्चर्य नहीं है। फिर इसे 'नया गीत' ही कहा जाता तो क्या बुराई थी बतर्ज 'नयी कविता' नयी कविता आदि के वजन पर 'नया गीत' शब्द अधिक संगत होता है।

ऐसा कहा गया है कि 'नवगीत' का नामकरण 'नयी कविता' या 'नयी कहानी' के वजन पर हुआ है जैसा कि कुछ लोग मानते हैं। डॉ0 रवीन्द्र भ्रमर कहते हैं कि स्पष्ट है कि नवगीत जैसा यह नाम नयी कविता के वजन पर आया है। डॉ0 विजयेन्द्र

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 1, February 2026 Impact Factor: 8.2

स्नातक की दृष्टि में गीत का पुनः प्रतिष्ठा के लिए पहला प्रयास तो यह हुआ है कि उसे परम्परा से हटाकर नयी कविता के साम्य पर 'नवगीत' शब्द को सापेक्षित बतलाते हुए नवगीत से व्यवहृत किया गया।

देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' तो इसके नामकरण के प्रश्न को अत्यंत उपेक्षित स्वरों में स्मरण करते हुए 'नयी कविता' के तर्ज पर 'नया गीत' और अन्तरगता 'नवगीत' होना नियति मानते हैं। मेरी धारणा है कि नवगीत का नामकरण 'नयी कविता' के वजन पर हुआ होता तो वह मात्र 'नयागीत' होता।

'नवगीत' संज्ञा के नामकरण के पीछे प्रथम प्रयोक्ता की अन्तश्चेतना में क्या अनुगूँज रही होगी; यह अनुमान लगाना तो कठिन है पर ऐसा लगता है कि निराला का वह गीत जिससे 'नव गति, नव लय, ताल छंद नव' की अभ्यर्थना है। ऐसा सोचना 'नव' शब्द के साम्य के कारण नहीं है बल्कि इस गीत में नव्य रचना–विधान के प्रति जो प्रबल कामना व्यक्त है और संयोगवश यह कामना गीत में उसकी रचनात्मक उपलब्धि पाते देखकर ही यह नाम अस्तित्व में आया है। किसी प्रचलित सशक्त काव्यधारा के संस्कारों से अप्रभावित रहना रचनाकारों के लिए प्रायः असंभव है।

नवगीत के नामकरण के लिए प्रो0 विष्णुकांत शास्त्री का यह अनुमान भी नहीं है जो संयोगवश उपर्युक्त धारणा का पूरक लगता है कि 'नवगीत' संज्ञा की स्वीकृति संभवतः नवगीत कारों के अवचेतना मानस में सक्रिय छायावादी संस्कार की सूची का है, जिसमें बोलचाल की सपाट भाषा के ऊपर कोमलकान्त पदावली को वरीयता दी जाती है।

अज्ञेय एवं डॉ0 विद्यानिवास मिश्र ने 'नये गीत' को मात्र 'गीत' कहा है। इन दोनों के विचार में नवगीत का स्थान पर्याप्त स्थापित होने की संभावना को व्यक्त करता है।

नवगीत के नामकरण प्रसंग में ध्वजवाहक डॉ0 शंभुनाथ सिंह का यह कथन सर्वाधिक उपर्युक्त और तर्क संगत है कि 'नवगीत स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के तीन दशकों में विकसित यह नवीन काव्यधारा है, जो एक ओर पारंपरिक गीत धारा से नितान्त भिन्न है। दूसरी ओर समसामायिक 'नयी कविता' से कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर पूरी तरह अलग हटी हुई है। मात्र गीत कहने से उसकी पहचान खो जाती है और नयी कविता कहने से उसकी अस्मिता ही लुप्त हो जाती है अतः नवगीत ही उसका एकमात्र सार्थक नाम है।

नवगीत कविता में प्रकृति वह विशिष्ट उपादान है जो न सिर्फ मुखर होकर प्रस्तुत होती है, बल्कि उसके प्रति नवगीतकारों का दृष्टिकोण साफ–साफ दिखाई देता है। नवगीत की प्रकृति व्यष्टि एवं समष्टि का द्वन्द्व है–वैचारिक दुनिया में मार्क्सवाद के प्रवेश के साथ ही यह प्रश्न प्रमुखता से उभरा कि साध्य व्यक्ति है या समाज? प्राथमिकता व्यक्ति को दी जाय या समाज को? हमारी चिन्ता व कर्म समष्टि हित केन्द्रित हो अथवा व्यक्ति केन्द्रित हो? मार्क्सवाद के जन्म से पूर्व समाज या समष्टि का अस्तित्व न था, या कि मानवीय चेतना की कोई सामाजिक अवधारणा न थी। सामाजिक चिन्तक डॉ0 राममनोहर लोहिया की यह धारणा अनुभूत सत्य जान पड़ती है। ''कोई द्वन्द्व दिखाई नहीं पड़ता व्यक्ति समष्टि में। उसी तरह से पुरुष और प्रकृति में द्वन्द्व नहीं है। आमतौर से लोग द्वन्द्व देखते हैं और एक या दूसरे को अपना लेते हैं। लेकिन मैं अपनी बात कहते हुए यह चेतावनी भी देना चाहता हूँ कि ऐसे भी लोग होते हैं जो खिचड़ी पकाया करते हैं, जो दोनों का भेद नष्ट कर दिया करते हैं। इस कथन में विशेष ध्यान देने वाली बात व्यक्ति और समष्टि का भेद पहचानते हुए, द्वन्द्व देखते हुए सामाजिक कल्याण के अभीष्ट की मंशा व्यक्त है।

दरअसल कवि का विचार– भाव विधि उसकी सामाजिक चेतना की समृद्धि या विस्तार है। सामाजिक चेतना का विस्तार जनतांत्रिक मूल्यों के लिए अनथक लगातार संघर्ष से होता है, और सामाजिक यथार्थ से जुड़ा यह आत्म–संघर्ष ही काव्य में एक ऐसे संश्लिष्ट चित्र को प्रस्तुत करता है– जहाँ निजी एकान्त–साधना की आकांक्षा समष्टि हित को फलीभूत देखना चाहती हैं –

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 1, February 2026 Impact Factor: 8.2

"दलित जन पर करो करुणा!
दीनता पर उतर आये
प्रभु, तुम्हारी शक्ति अरुणा!
हरे तन–मन प्रीत पावन
मधुर हो मुख मनोभावना
सहज चितवन पर तरंगित हो
तुम्हारी किरण–तरुणा।"

निजी अनुभूति और सामाजिक यथार्थ के एकत्र संश्लिष्ट विधान वाले निराला के 'जला है जीवन यह', 'बादल गरजो', 'शिशिर की शर्वरी' स्नेह निर्झर बह गया है' आदि अनेक गीतों विशेषकर 'बाहर मैं कर दिया गया हूँ' को छोड़कर इस सहज भावानुभूति वाले गीत को उदाहरण के तौर पर रखने का उद्देश्य नवगीत में व्यक्त व्यष्टि और समष्टि के स्वरूप को प्रस्तुत करना है।

नवगीत की प्रकृति व्यैयक्तिकता और आत्मपरकता पूर्ण है जो नवगीत की स्वाभाविक प्रकृति मानी जाती है। इसलिए इस बात का पूरक निष्कर्ष यह निकाल लिया जाता है कि नवगीत में भी भीतर की अनुभूति ही व्यक्त की जा सकती है, बाहर का यथार्थ नहीं। हमने इस प्रकरण की शुरूआत निराला के गीतों से इसलिए की थी ताकि इस भ्रम का सप्रमाण निराकरण किया जा सके। लेकिन इसका आशय यह नहीं है कि निराला के गीतों में उपलब्ध भीतर और बाहर के यथार्थ का द्वन्द्वात्मक संगठन आगे नवगीत में नहीं है। दरअसल, सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति के लिए, शिल्प–संकुचन कोई बाधा नहीं है, बल्कि बाधा है रचनाकार की सामाजिक चेतना का संकुचन।

नवगीतकार की दृष्टि में सामाजिक संघर्ष और निजी संघर्ष दो समानान्तर अनुभूतियाँ नहीं हैं। नवगीतकार मुकुट बिहारी 'सरोज' कहते हैं कि– ''मैंने जो जिया है केवल उसी को व्यक्त करने की चेष्टा नहीं की है बल्कि जो जीने के संस्कार मुझे मिले उन्हें भी अभिव्यक्ति देने का यत्न मैंने किया है।[4] इसलिए उनकी रचनाओं में सामाजिक यथार्थ से जायत पीड़ा, वर्जना, असन्तोष और विद्रोह ही नहीं आशा, उत्कर्ष और आस्था भी व्यक्त है जो भविष्य का संकेत देती है।

नवगीत की गीत–विधा की ऋजुता वैयक्तिकता, भावात्मकता, आत्माभिव्यक्ति आदि परम्परागत सीमाओं को भेदकर समष्टि को बाहरी दुनिया के यथार्थ को अन्तर्भुक्त कर सका है। यह उपलब्धि उसमें संक्षिप्तता के वैशिष्ट्य को बरकरार रखते हुए पाई है, जबकि नवगीत से इतर लम्बी–लम्बी वर्णनात्मक और कथात्मक रचनाएँ एकांत– यंत्रणा, अजनबीपन, घुटन, आत्मपीड़ा, संत्रास और उन्मुक्त यौनाचार के प्रति ललक या कि समाज की घोषित पक्षधरता व्यक्त करते हुए छद्म क्रान्ति के बारे में उलझ कर रह गई है। वहाँ समय के यथार्थ और निजता की संश्लिष्ट अभिव्यक्ति तो दूर दोनों आतिकारो के अलग–अलग छोर दिखाई देते हैं। नवगीत में व्यक्ति–संघर्ष की सामाजिक संघर्ष में परिणित या इकाई और समूह के द्वन्द के प्रचुर काव्यात्मक प्रतिफलन हैं–

"अँधियारे जंगल में एक मोमबत्ती
काजल के छटने का प्राण रत्ती रत्ती
भीतर की एक अदद गंध के सहारे
बदबू के घने–घने धूर को बुहारे
गुन गाएँ पीर बस्म औ मैया सत्ती

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 1, February 2026
Impact Factor: 8.2

दम घोटू धुआँ जहाँ कुण्डलियाँ मारे
वहाँ चलो किरनों के काफिले उतारे
तहखाने, तिजोरियाँ छत्ती दो छत्ती।''[5]

किसी काव्य विधा के मूल्यांकन एवं उसके अध्ययन में उसके स्वरूप को समझना आवश्यक होता है। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए उस सुविधा के दोनों पक्षों अर्थात् शिल्प और कथ्य; को जानना आवश्यक होता है। नवगीत का स्वरूप और परिचय प्राप्त करने के लिए इसके शिल्प और कथ्य दोनों को समझना आवश्यक है। पहले नवगीत के शिल्प पर चर्चा की जा रही है।

नवगीत के एक–एक संकलन की समीक्षा में शिल्प संबंधी चर्चा करते हुए रणवीर दिनेश लिखते हैं कि– 'तुकान्तों के नकार और मात्राओं के अतिक्रमण के बावजूद इन गीतों में लयबद्धता सम्पूर्णतः मौजूद रहती है। बढ़िया तुकांतों और गिनी–चुनी मात्राओं वाली पंक्तियाँ भी लयहीन हो सकती हैं, जिन्हें दरअसल छंदहीन कहा जाना चाहिए। वास्तव में नवगीत का रूपगत या स्वरूप पहचान तुकांत और सममात्रिक छंदों पर ही आश्रित नहीं है, वरन् सच तो यह है कि उसके शिल्प स्तर पर आश्चर्यजनक विविधता मिलती है। साहित्य मंच पर नवगीत की प्रतिष्ठा के साथ ही नवगीत रचनाकारों की जो बाढ़ आई है उसका एक प्रमुख कारण उसके शिल्प को साक्ष्य मानकर ऐसे छंद की रचना करना रहा है तो तुक और मात्रात्मक वृत्त की रचना करता है। ऐसे रचनाकार काव्य की लयात्मकता से उतने ही अनजान हैं जितने मुक्त छंद के नाम पर गद्य अथवा अकविता लिखने वाले काव्यकार रहे।

नवगीत विषयक आलोचना साहित्य में उसके शिल्प पर सबसे कर्म चर्चा की गई है और जो विचार प्रकाश में आये हैं, उनसे नवगीत के रूप विधान का एक व्यवस्थित स्वरूप सामने नहीं आ पाया है। जो लोग नवगीत को लोकगीत का सहधर्मी मानते हैं वे उसकी लय या धन को वरीयता देते हैं, जो उसकी गेयता का प्रमुखता देते हैं व उसमें संगीतात्मकता अनिवार्य मानते हैं और जो नवगीत को गीत की आधुनिक स्वरूप मानते हैं वे उसकी तुक योजना और मात्रा गणना पर बल देते हैं। इस उहापोह के चलते जब–जब नवगीत चर्चा प्रसंग में आता है, तब–तब उसके शिल्प पर संक्षेपतः विचार कर लिया जाता है।

डॉ0 गंगा प्रसाद विमल नवगीत के शिल्प पर विचार करते हुए लिखते हैं कि– 'संगीतात्मकता छंद की मोहताज नहीं है। एक छंदहीन स्थिति में अपनी लययधर्मी ताकत से अपना नितांत भिन्न, भीतर, अव्यक्त सा संगीत रूप पा लेती है और फिर अपनी एक निश्चित, गणितीय पहचान बनाती है। गणितीय पहचान जिसमें निश्चितता और वैज्ञानिकता निहित है। अतः गीत और कविता के भेदों इत्यादि रूपों या उनके अंतःसम्बन्धों पर फिर से विचार होना चाहिए।

'शिल्प सन्दर्भ' में डॉ0 नरेन्द्र सिंह फौजदार का वक्तव्य नवगीत की विशेष पहचान भाषा और शिल्प के अन्वेषण के कारण है। नवगीत कारों ने लोकभाषा से सीधे चुने गये शब्द गीतों के कथ्य को उपर्युक्त भूमि देते हैं। इस संबंध में डॉ0 विजय बहादुर सिंह का कथन सटीक है– 'नवगीतकारों ने भाषा को गढ़ने और विलक्षणता प्रदान करने के बदले उसका अन्वेषण किया और अन्वेषण के साथ ही उसकी पूर्ण रचना में संलग्न हो गए। भाषा का यह अन्वेषण सम्पूर्ण भारतीय परिवेश को एक इकाई मानकर किया था इसलिए नवगीतों की भाषा में लोक बोलियों के शब्दों से लेकर आधुनिक नागरिक सभ्यता की शब्दावलियाँ तक मिलती हैं।'

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 1, February 2026
Impact Factor: 8.2

नवगीतकारों को लोकभाषा के तेवर की पहचान से लेकर मुहावरे, लोकोक्तियों से अंतरंग परिचय है। जनता की एकांत और सार्वजनिक बोली की पहचान, दुःख–तकलीफ को व्यक्त करने वाली भाषा, संकेत चिह्न प्रतीक आस्था के प्रतीक, पौराणिक बिम्बों की आंचलिक व्याख्याएँ तथा लोकजीवन के संदर्भों का गीतकार को बोध होना बहुत आवश्यक है।

छंद योजना, शिल्प विधान का महत्वपूर्ण अंग है। भावानुरूप छंद योजना अनुभूति और शैल्पिक समन्वय की सृष्टि करती है। भाषा, बिम्ब, शिल्प, छंद, लय, प्रतीक, बिम्बधर्मिता, चित्रात्मकता आदि गुणों के कारण नवगीत जन–जन का गीत बन सका।

नवगीत का छन्द बद्ध होना उसकी गरिमा को बढ़ाता है, परन्तु नवगीत छंद का अनुचर नहीं है। यह अपनी मर्जी से छन्द को पकड़ लेता है और अपनी मर्जी से ही छन्द को छोड़ देता है। अनूप अशेष ने इसीलिए कहा है– नवगीत को नई कविता से दुराग्रह नहीं है; किंतु भारतीय जातीय संस्कृति, सोच और लय के प्रति आग्रही अवश्य है। नवगीतकार श्रेष्ठ छन्दमुक्त कविता लिख सकते हैं। यह और भी सहज है। लिखी भी है। ओम प्रभाकर, शलभ श्री राम सिंह, प्रेम शंकर रघुवंशी, स्व0 भगवान स्वरूप 'सरस' स्व0 देवेन्द्र कुमार और स्वयं स्व0 शंभूनाथ सिंह इसके उदाहरण हैं। यह तो प्रमाणिता पूर्वक कहा जा सकता है कि छंद के ऊपरी विरोध के बावजूद वही कवि अच्छी और बड़ी कविताएँ लिख सके हैं, जो छंद में पहले या कभी–कभी अब भी लिखते रहे हैं।''

कुमार रवीन्द्र के नवगीत का एक अंश –

'याद आ रहा है –
वही नदी का छोर पुराना
वहाँ बैठकर
हम दोनों ने
धूप छाँव के खेल किये थे
मिले हमें थे
ढाई आखर वहीं
और हम उन्हें जिये थे/वहीं
एक दूजे को हमने था पहचाना।'

उपर्युक्त उद्धरण में छन्द या अन्त्यानुप्रास का मोह उतना नहीं है जितना परम्परागत गीत काव्य में रहा है, परन्तु इसे छन्द मुक्त रचना भी नहीं कह सकते। छन्द के लिए समानान्तरता का होना अनिवार्य है, चाहे वह चरण स्तर पर हो या उसके अंश के स्तर पर। उच्चारण की दृष्टि से जिस शब्द समूह को एक साथ उच्चरित करना ध्वनि और अर्थ दोनों दृष्टियों से सुविधाजनक होता है, उसे भाषा विज्ञान में वृहत् खंड कहा जाता है। यथा– 'उसका परिश्रम एक दिन रंग लाया।' वाक्य में तीन वृहत् खंड हैं– 1. उसका परिश्रम, 2. एक दिन, 3. रंग लाया। इसी प्रकार काव्य में भी उच्चरण की दृष्टि से बृहत् खंड होते हैं।

उपर्युक्त उदाहरण में कुल 88 मात्राएँ हैं, जिन्हें आठ–आठ मात्राओं में 14 खण्डों में विभाजित करके उच्चरित किया जा सकता है। इन ग्याह खण्डों में मात्राओं और ध्वनि–लय की समानान्तरता व्याप्त है। इस आधार पर ये 14 खण्ड इस प्रकार होते हैं –

'याद आ रहा/वही नदी का/छोर पुराना/वहाँ बैठकर/हम दोनों ने/धूप छाँव के/खेल किये थे/मिले हमें थे/ढाई आखर/वहीं और हम/उन्हें जिये थे/वहीं एक दूजे को हमने/था पहचाना/' ये 14 टुकड़े आठ–आठ मात्राओं के हैं तथा वजन और लय में समान है। इनमें छंद की सभी अनिवार्यताएँ व्याप्त हैं। हाँ, तुकान्त केवल एक ही स्थान पर है– 'पुराना' और 'पहचाना'

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 1, February 2026 Impact Factor: 8.2

में ही। लेकिन यह भी निश्चित है कि तुकान्त का सम्बन्ध छंद से नहीं अलंकार से है और यह अनुप्रास का एक भेद है, जिसे अन्त्यानुप्रास कहा जाता है। निराला, जो कि अतुकान्त कविता के जनक माने जाते हैं, उन्होंने छंद की इसी बुनावट को आधार बनाया था। यथा –

मैं अकेला
आ रही मेरे दिवस की सांध्य बेला
पके आधे बाल मेरे
हुए निष्प्रभ गाल मेरे।.....

तात्पर्य यह है कि नवगीत छन्द विधान के आधार को व्यापक धरातल पर अपनाया है। इस विश्लेषण से स्पष्ट है कि नवगीत के स्वरूप में छन्द–विधान महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है तथा छन्द उसकी अभिरचना का प्रमुख धरातल है, भले ही वह गीति काव्य की पुरानी परम्परा का पूरा अनुसरण न करता हो।

निष्कर्ष:

इस प्रकार कहा जा सकता है कि 'नवगीत' हिंदी साहित्य का वह जीवंत आंदोलन है जिसने गीत विधा को जड़ता से बचाया और उसे आधुनिक भावबोध से समृद्ध किया। अपने अभ्युदय काल से लेकर आज तक, नवगीत ने समय के साथ बदलते मानवीय सरोकारों को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ अभिव्यक्त किया है।

नवगीत के विस्तार और प्रासंगिकता को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है–नवगीत ने छायावादी काल्पनिकता और नई कविता की अति–बौद्धिकता के बीच एक सेतु का काम किया। इसमें गाँव की माटी की महक भी है और शहर की यांत्रिकता का दर्द भी। इसने पारंपरिक उपमानों को छोड़कर नए प्रतीकों, बिम्बों और आम बोलचाल की भाषा को अपनाया, जिससे कविता सीधे पाठक के हृदय तक पहुँच सकी।

तमाम साहित्यिक उतार–चढ़ावों और विधागत बहसों के बावजूद, नवगीत का विस्तार आज भी अनवरत जारी है। आज का नवगीतकार वैश्विक चुनौतियों, तकनीकी युग की विसंगतियों और मानवीय मूल्यों के क्षरण पर भी प्रहार कर रहा है। नवगीत केवल अतीत की स्मृतियों का गान नहीं है, बल्कि वह वर्तमान का जीवंत दस्तावेज है। अपनी लयात्मकता, संक्षिप्तता और गहरी सामाजिक प्रतिबद्धता के कारण नवगीत का भविष्य अत्यंत उज्ज्वल है, और यह हिंदी काव्य–धरा को हमेशा समृद्ध करता रहेगा।

संदर्भ सूची:

(1) नवगीत दशक–1. (सं. शंभुनाथ सिंह) पराग प्रकाशन, दिल्ली–32, प्रथम संस्करण–1982
(2) नवगीत संवेदना और शिल्प (डॉ0 सतेन्द्र शर्मा) साहित्य संगम, इलाहाबाद 1993
(3) गीतांगिनी
(4) मुकुट बिहारी 'सरोज' : 'किनारे के पेड़' : पूर्वाभ्यास
(5) उमाकान्त मालवीय : 'सुबह रक्त पलाश की' : पृ0 81
(6) केदारनाथ सिंह : 'पाँच जोड़ बांसुरी' : स. चन्द्रदेव सिंह, पृ0 208, 209